

# TheHindi Sahitya

Home > Study Material For UG > B.A. (Hons.) Hindi > Book >

## आदिकाल की प्रमुख प्रवृत्तियाँ|| रासो, धार्मिक एवं लौकिक साहित्य



By TheHindi Sahitya

Last updated Jul 29, 2023

BOOK

B.A (PROGRAMME)

B.A. (HONS.) HINDI



### आदिकाल : सिद्ध काव्य

#### • सिद्धों का परिचय

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में सिद्ध काव्यधारा का उद्भव जैन काव्यधारा के समान्तर देख जा सकता है जो प्रायः 8वीं सदी के मध्य से आरम्भ हो जाता है।

सिद्ध वज्रयानी थे, वज्रयान बौद्ध धर्म की एक शाखा है ईसा की आरंभिक सदी में बौद्ध धर्म का दो भागों में विभाजन हो गया। ये दो पंथ हीनयान और महायान नाम से प्रसिद्ध हुए। हीनयान ने पारंपरिक रूप में बौद्ध सिद्धांत को अपनाया और महायान ने उसमें कुछ मौलिक परिवर्तन कर अपने पंथ का आधार तैयार किया। महायान संप्रदाय में जटिल कर्मकांड का विकास हुआ जो नवीन ऐन्द्रजालिक रहस्यवाद से संबंधित था। इस प्रकार महायान में भी एक नवीन संप्रदाय का उदय हुआ। इस नवीन संप्रदाय ने ऐन्द्रजालिक शक्तियों को प्राप्त करना अपना उद्देश्य बनाया। इस शक्ति को वे वज्र कहते थे, अतएव बौद्ध धर्म के इस नवीन संप्रदाय का नाम वज्रयान पड़ा। इस संप्रदाय का प्रसार देश के पूर्वी भागों में अधिक था। असम, बिहार, बंगाल और नेपाल, सिद्धों के कार्यक्षेत्र थे।

सिद्ध काव्यधारा को आदिकालिन साहित्य की एक प्रधान रचनात्मक धारा के रूप में पहचाना जाता है। जिसका श्रेय मुख्य रूप से राहुल सांकृत्यायन और हजारीप्रसाद द्विवेदी को जाता है। इस सम्प्रदाय में 84 सिद्धों की सूची उपलब्ध है। आज जो 84 सिद्धों की बात की जाती है, उनकी खोज का श्रेय राहुल सांकृत्यायन को जाता है। जिन्होंने सिद्ध साहित्य के मूल रूप को खोज निकाला। चौरासी सिद्धों में सरहपा, शबरपा, लुङ्पा, कण्ठपा, डोम्भीपा, कुकरीपा और नागार्जुन आदि उल्लेखनीय हैं। 84 सिद्धों में 4 योगिनियों की भी चर्चा मिलती है- मणिभद्र, मेखलापा, कनपलापा और लक्ष्मीकरा।

#### • सिद्धों की साधना के सिद्धांत

सिद्धों ने सहज योग और महासुख का सिद्धांत दिया है। सिद्धों ने बौद्ध परंपरा में चली आती हुई निर्वाण भावना का तिरस्कार कर महासुख की अनुभूति को प्रमुखता प्रदान की। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सिद्धों का सहजयोग और महासुख अनेक स्थलों पर उनकी उलटवासियों के साँचे में बड़ा ही सम्भ्रम-पूर्ण अर्थ देता है। यह तय करना मुश्किल हो जाता है कि वे संघा भक्ति में जो कुछ कह रहे हैं उसका आशय योग परक है अथवा तांत्रिक चर्यापरक है क्योंकि सहज, महासुख, महामुद्र आदि शब्दों का व्यवहार कालांतर में नाथ पंथियों के यहाँ भी मिलता है जहाँ इन शब्दों का अर्थ निश्चित ही योगपरक है।

सिद्धों ने अपनी साधना का लक्ष्य ज्ञान को न मानकर अनुभूति को माना है। तंत्र से प्रभावित होकर उन्होंने अपने समस्त ज्ञान, साधना पद्धति, हठयोग को अनुभूति के रंग से रंग दिया। उसके पिछे सिद्धों का उद्देश्य था- बौद्ध धर्म के निवृत्तिमूलक दुःखवादी रूप का निराकरण करके आनंद की भावना की प्रतिष्ठा। आनंद को सिद्धों ने आध्यात्मिक गहनता माना है। इसके लिए जिस शब्दावली का प्रयोग उन्होंने किया है, वह लौकिक अर्थ में प्रणय के घनिष्ठ चित्र हैं। सिद्धों ने जिस काव्य रूप में अपनी अभिव्यक्ति की, वे मूलतया दोहाकोष और चर्यापद हैं। दोहाकोष दोहा शैली में है और चर्यापद पद शैली में है। भक्तिकाल में ये दोनों शैलियाँ खुब लोकप्रिय हुई। जाहिर है कि भक्ति काव्य के लिए इन काव्य रूपों के चुनाव में सिद्ध काव्य प्रेरणा स्रोत की तरह कार्य करता है। तांत्रिक आचरण एक विशेष प्रकार की आध्यात्मिक साधना है जिसमें सिद्ध, स्त्रियों को अपनी साधना सहचरी बनाते थे और यौनिक आचरण को आध्यात्मिक साधना का माध्यम मानते थे। इस क्रिया में वे रसायन का भी व्यवहार करते थे और अनुष्ठानिक द्रव्यों का भी इस्तेमाल करते थे। वे विभिन्न प्रकार की मुद्राओं प्रणायाम क्रियाओं और रसायन का प्रयोग किया करते थे और इस सुख को वे महासुख कहते थे।

### • सिद्ध साहित्य

सिद्ध साहित्य से हमारा तात्पर्य वज्रयान परंपरा के उन सिद्धाचार्यों के साहित्य से है, जो अपभ्रंश के दोहे तथा चर्यापद के रूप में उपलब्ध है।

सिद्धों ने प्रबंध काव्य और खंडकाव्य के स्थान पर गीति और मुक्तक काव्य में रचना की है। चर्यापद और वज्रगीत गीतकाव्य के उदाहरण हैं तथा दोहे और अर्द्धालियाँ मुक्तक के उदाहरण हैं। दोहे में सिद्धों ने नीति के वचन तथा दार्शनिक खंडन मंडन को प्रस्तुत किया है। सिद्धों ने भाषा में अपभ्रंश के साहित्यिक वर्चस्व के स्थान पर देशभाषा को अपनी रचना का आधार बनाया। साहित्य के हर क्षेत्र में चाहे वह भाषा हो, बिंब हो, अनुभूति हो सिद्धों का योगदान एकदम मौलिक है। साहित्य में उन्होंने नये सौंदर्यबोध को प्रस्तावित किया है।

### • सिद्ध साहित्य के प्रमुख रचनाकार

सरहपा: सरहपा को प्रथम सिद्ध कवि माना जाता है जिनका काल 769 ई. बताया जाता है। वज्रयान पर इनके 32 ग्रंथों का अनुवाद मिलता है। इनकी कृतियों में काम कोष, अमृत वज्र गीत, दोहाकोष गीत, बसन्त तिलक, महामुद्रोपदेश आदि उल्लेखनीय हैं। दोहाकोष में इन्होंने गुरु महिला, कर्मकांडों का विरोध, कायारूपी तीर्थ की प्रशंसा तथा महासुख और सहज मार्ग का वर्णन किया है-

जहि मण पवण ण संचरइ, रवि ससि नाहि पवेश।  
तहि वत चित्त विसाम करू, सरहे कहिअ उवेश।।

आगे चलकर भक्ति काल में जायसी, तुलसी के यहाँ जो दोहा, चौपाई का सम्मिलित प्रयोग मिलता है, उसका आदि स्रोत सरहपा का ही काव्य है। सरहपा दोहा, चौपाई शैली के प्रथम प्रयोक्ता थे-

पण्डिअ सअल सत्य बक्खाणइ।  
देहहि बुद्ध बसन्त न जाणइ।।

सबरपा : सबरपा की 26 रचनायें मिलती हैं, जिसमें महामुद्रा वज्रगीत और शून्यता दृष्टि उल्लेखनीय है। उन्होंने कई चर्यापद भी लिखे हैं। शबरपा सरहपा के शिष्य थे, शबरों की सी भेषभूषा में रहने के कारण इनका नाम शबरपाद पड़ा। चर्यापदों की रचना अवहट्ट में हुई है

ऊँचा ऊँचा पर्वत तहाँ बसई सबरी वाली।

कणहपा : कणहपा सिद्धों में सर्वश्रेष्ठ विद्वान तथा सबसे बड़े कवि थे। राहुल सांकृत्यायन के अनुसार “कणहपा पाण्डित्य और कवित्व में बेजोड़ थे।”

कणहपा की 57 रचनायें मिलती हैं, 12 संकीर्तन पद मिलते हैं। उनका दोहाकोष उल्लेखनीय महत्त्व का है। जिसमें उन्होंने ब्राह्मणवादी व्यवस्था और कर्मकाण्डों का खण्डन किया है।

आगम वेउ पुराणे, पंडित मान बहंति।  
पक्क सिरी फल अलिअँ, जिमी वाहेरिअ भमयंति।।

लुइपा : लुइपा शबरपा के शिष्य थे। 84 सिद्धों में लुइपा का स्थान सबसे ऊँचा माना जाता है। लुइपा के काव्य में रहस्यात्मक तत्त्व की अधिकता मिलती है। उनकी कविता में आध्यात्मिक तत्त्वों के प्रतीकों का प्रयोग बहुलता में देखा जा सकता है

काआ तरुअर पंच विडाल  
चंचल चीए पइड्डा काल।

(काया रूपी तरुवर है और पंचेन्द्रियाँ हैं। चंचल चित्त में काल ने प्रवेश कर लिया है।)

स्पष्ट है कि सिद्ध काव्य में जिन काव्य रूढ़ियों का विकास हो रहा है, वे आगे चलकर अपने प्रशस्त रूप को प्राप्त करते हैं। सिद्ध काव्य भाव और भाषा दोनों क्षेत्रों में भक्तिकालीन काव्य का प्रेरणास्रोत है।

प्र. सिद्ध साहित्य की चर्चा करते हुए उसके अभिव्यंजना पक्ष पर प्रकाश डालिए।

## आदिकाल : नाथपंथ

### • नाथ शब्द का अर्थ और पंच के रूप में उसकी उत्पत्ति

अज्ञानता के अंधकार पर विजय पाकर अपने को ब्रह्मानंद में स्थित करने वाले नाथ हैं।

**नाथ का अर्थ है-** स्वयं का स्वामी, इस व्युत्पत्ति के आधार पर ही इस पंथ उद्भव के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण सूत्र का पता चलता है-

(1) नाथपंथ का उद्भव सिद्धों की भोगवादी परम्परा के खिलाफ प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ।

(2) नाथपंथ का उद्भव औपनिषदिक दर्शन में शैव मत के समाहार से हुआ। अनेक विद्वान ऐतिहासिक साक्ष्यों से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 9वीं-10वीं सदी में नेपाल की तराई में बौद्धों और शैवों का मेल हुआ जिससे नाथपंथ अस्तित्व में आया।

इस पंथ को चलाने वाले मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) तथा गोरखनाथ (गोरक्षनाथ) माने जाते हैं। इस पंथ के साधक लोगों को योगी, अवधूत, सिद्ध, औघड़ तथा कनफफटा भी कहा जाता है। नाथ-साधु हठयोग पर विशेष बल देते थे, वे योग मार्गी थे और निर्गुण निराकार ईश्वर को मानते थे।

नाथपंथ में गोरखनाथ सबसे महत्वपूर्ण थे, इन्हें नाथ संप्रदाय के प्रवर्तक के रूप में भी स्वीकारा जाता है। गोरखनाथ नाथपंथ का प्रवर्तन करते हुए जिन दार्शनिक मान्यताओं को प्रतिष्ठित करते हैं वे औपनिषदिक परम्परा से ली गई है किन्तु गोरखनाथ का जो मौलिक योगदान है वह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है, उदाहरण के लिए उन्होंने नाथपंथ में हठयोग का प्रवर्तन किया जो आध्यात्म को शरीर विज्ञान के निकट ला प्रतिष्ठित किया। नाथपंथ की दार्शनिक मान्यताओं का सांगोपांग विश्लेषण हठयोग प्रदिपिका नामक ग्रंथ में मिलता है।

जिस प्रकार सिद्धों की संख्या 84 बतायी जाती है, उसी प्रकार नाथों की संख्या 9 बतायी गई है। इन 9 नाथों में नागार्जुन जड़भरत, हरिश्चन्द्र, सत्यनाथ, भीमनाथ, गोरखनाथ, चर्पटनाथ, चौरंगीनाथ, भर्तृहरिनाथ का नाम गिनाया जाता है। इन योगियों में गोरखनाथ का व्यक्तित्व निश्चित ही सबसे महान है। उनकी महत्ता का अनुमान इसी तथ्य से किया जा सकता है कि उनके योगपंथ का प्रभाव समूचे भारतवर्ष के विभिन्न पंथों और संप्रदायों पर आज भी देखा जा सकता है।

#### • नाथपंथ की दार्शनिक मान्यता

(1) नाथों की मान्यता थी- 'जोई-जोई पिण्डे, सोई ब्रह्मांडे' अर्थात् जो शरीर में है वही ब्रह्मांड में है। इस अनुभूति को प्रकट करने के लिए उन्होंने उलटबाँसी का प्रयोग किया है। उलटबाँसी के पीछे नाथों का यह तर्क था कि सिद्धि की अवस्था तक पहुँचते ही साधक का कायाकल्प हो जाता है और वह लोक-व्यवहार को विपरीत दृष्टि से देखने लगता है।

**चलि दे अबकि कोयल मोरी। धरती उलटि गगन कू दोरी।**

**गइयाँ वपडी सिंघ ने घेरे। मृतक पसू सूद्र के उचरे।।**

यहाँ कोयल साधक की आत्मा का प्रतीक है। धरती स्थिर है वह उलट नहीं सकती परंतु साधना में धरती जीव का प्रतीक है जो गगन की ओर दौड़ लगाती है अर्थात् परम ब्रह्म से मिलना चाहती है।

(2) नाथों की मान्यता थी कि पिण्ड में ब्रह्माण्ड का निवास है। देह में परमात्मा की सारी शक्तियाँ विद्यमान होती हैं, यौगिक क्रियाओं से उन्हें जगाया जा सकता है।

(3) निवृत्तिधर्मी मार्ग ही आध्यात्मिक साधना के लिए श्रेयस्कर है, वैराग्य और इन्द्रिय संयम से ही सिद्धि प्राप्त की जा सकती है। निःसंदेह सभी नाथयोगी निवृत्तिधर्मी योगपंथ के अनुयायी थे। जाहिर है कि ये सभी संन्यासी थे।

(4) नाथ परम्परा में सभी नाथयोगी दार्शनिक संकल्पनाओं की अभिव्यक्ति कविता के माध्यम से करते थे, जो प्रायः दोहा या पद शैली में मिलती है। इनमें योगी भर्तृहरि तो संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित एवं उच्च कोटि के वैद्याकरण माने जाते हैं। उनका श्रृंगारशतक और वैराग्यशतक मानवीय चेतना के दो सर्वथा विरोधी ध्रुवों का सर्जनात्मक आख्यान है।

#### • नाथपंथ की साधनात्मक पद्धति (हठयोग)

गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित योग साधना का पहला सूत्र है कि सांसारिक प्रवृत्ति से दूर रहकर ही मनुष्य योग का अधिकारी हो सकता है। गोरखनाथ ने योगसाधना के अंतर्गत पंतजलि के योगसूत्र का भी सहारा लिया है। यम, नियम, संयम, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि जैसे सोपान इस पंथ में मान्य हुए। गोरखनाथ ने जिस हठयोग का प्रवर्तन किया वह अपने उद्गम में प्रतीकात्मक है। ह प्रतीक है सूर्य का और ठ प्रतिक है चन्द्र का। नाथपंथ की यह मान्यता है कि मेरुदण्ड के निचले सिरे पर स्थित मूलाधार चक्र में कुण्डलिनी चक्र का निवास है। कुंडलिनी मूलाधार चक्र से आगे बढ़कर शेष पाँच शक्ति चक्रों मणिपूरक, अनाहद, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार चक्रों को वेधन करती है। कुंडलिनी स्वयं शक्ति का प्रतीक मानी गयी है और चक्र में परमात्मा शिव का निवास बताया गया है, शक्ति एवं शिव का समागम ही ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति है। जिस साधक को यह अवस्था उपलब्ध हो जाती है वह जीवन में ही मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

#### • नाथ साहित्य

नाथपंथ के मुख्य रचनाकारों में गोरखनाथ, चौरंगीनाथ, गोपीचंद, चुणकरनाथ, भरथरी आदि का नाम प्रसिद्ध है। उनमें से किसी के साहित्य की प्रामाणिकता असंदिग्ध नहीं है। गोरखनाथ की देश भाषा में लिखी हुई रचनाओं में 'गोरख बोध', 'गोरखनाथ की सत्रह कला', 'दत्त गोरख संवाद', 'योगेश्वरी साखी', 'नरवड बोध', 'विराट पुराण', 'गोरखसार' तथा 'गोरख बानी' उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त गोरखनाथ की कुछ पुस्तकें संस्कृत में भी मिलती हैं।

गोरखनाथ की 40 रचनाएँ बतायी जाती हैं जिनमें डॉ. पिताम्बर दत्त बड़थवाल ने 14 ग्रन्थों को प्रामाणिक मानकर उनका सम्पादन 'गोरखबानी' नाम से किया। गोरखनाथ के काव्य की कुछ बानियाँ

**गगन मण्डल औंठा कुँआ, तहां अमृत का वास**

**गगन मण्डल में गाय वियायी, कागद दही जमाया**

अन्य नाथ कवियों की छुटपुट रचनाएँ मौखिक रूप में उपलब्ध है। नाथ साहित्य की प्रामाणिकता संदिग्ध है। उसकी प्रामाणिकता के संदेह का आधार रचनाओं की भाषा है। जिस प्रकार की भाषा का प्रयोग गोरखनाथ के साहित्य में मिलता है, उससे अनुमान लगाया जाता है कि उस भाषा का प्रचलन गोरखनाथ के काल में नहीं था। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि गोरखनाथ के नाम पर जो रचनाएँ मिलती हैं उन्हें नाथपंथ के अनुयायियों ने एकत्रित किया होगा। नाथपंथी साहित्य रचने के उद्देश्य से लेखन नहीं कर रहे थे। वे अपनी संवेदनाओं और अनुभव को लोगों से साझा करना चाहते थे। उसके लिए उन्होंने पुस्तक लिखने की आवश्यकता को महसूस नहीं किया और उसका परिणाम यह हुआ कि उनकी वाणी साहित्य बनकर लोगों के मुख के माध्यम से ही बहुत दिनों तक जीती रही। इस प्रक्रिया में नाथों की वाणी की भाषा बदल गई और भाव भी परिवर्तित हो गए। आचार्य शुक्ल ने नाथों की भाषा को सधुक्कड़ी भाषा कहा है, जो वस्तुतः संपर्क भाषा थी।

नाथ साहित्य में अंतःसाधना का भी विस्तार से वर्णन मिलता है। नाथ साहित्य में साधनात्मक शब्दावली का प्रयोग बहुलता से मिलता है। नाथ आचरण की शुचिता पर अधिक बल देते हैं, परंतु यह आचरण सामान्य जन के लिए नहीं था, यह जोगी के लिए था-

**जोगी होई पर निंदा झखै। मद मास अरु भांगि जो राई।  
इकोता सैं पुरिषा नरकहि जाई। सति सति भाषत श्री गोरख राई।।**

नाथपंथ का महत्त्वपूर्ण योगदान भक्तिकालीन निर्गुण साहित्य को अपना अनुभव सौंपने में है। नाथपंथ ने निर्गुण पंथ के लिए एक मार्ग तैयार कर दिया था। कबीर साधना और भावना दोनों स्तर पर नाथपंथ के सिद्धांत को अपनाते हैं। आचार्य शुक्ल ने लिखा है- 'कबीर आदि संतों को नाथपंथियों से जिस प्रकार साखी और बानी शब्द मिले हैं, उसी प्रकार साखी और बानी के लिए बहुत कुछ सामग्री और सधुक्कड़ी भाषा भी।'

**प्र. नाथपंथ की दार्शनिक मान्यताओं पर प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट कीजिए कि मध्यकालीन भक्ति आंदोलन पर किस प्रकार इस पंथ का प्रभाव पड़ता है।**

या

**प्र. नाथपंथ पर टिप्पणी लिखिए।**

या

**प्र. नाथ साहित्य की विशेषताओं का संक्षिप्त उल्लेख कीजिए।**

## रासो साहित्य

### • रासो काव्य की पृष्ठभूमि

रासो काव्य से हमारा तात्पर्य आदिकालीन साहित्य की वीरगाथात्मक कृतियों से है। आदिकालीन साहित्य में रास ग्रंथ और रासो ग्रंथ दोनों प्रकार की रचनाओं की चर्चा मिलती है। रास साहित्य और रासो साहित्य का मुख्य अंतर भानुभूति को लेकर है। रास साहित्य की संवेदना धार्मिक अनुभूति अथवा लौकिक प्रेम की अनुभूति से जुड़ी हुई है। रास काव्य का प्रसार जैन साहित्य में देखने को मिलता है। आदिकालीन साहित्य में रास काव्य का नाम जैन रचनाकारों द्वारा लिखे गए ग्रंथों और 'संदेश राक्षक' जैसे प्रेमानुभूति प्रधान काव्य संवेदना के लिए रूढ़ हो गया है।

अब हम रासो साहित्य को समझने का प्रयास करेंगे। रासो शब्द की व्युत्पत्ति रासक, रासा, राउस आदि शब्दों से मानी जाती है। राजस्थानी में रासो का अर्थ होता है युद्ध या कलह। रासो शब्द का व्यवहार छंद में वैविध्य के लिए भी होता है। आचार्य शुक्ल ने रासो शब्द की व्युत्पत्ति रसायण शब्द से मानी जाती है। वस्तुतः रासो साहित्य की रचना चारणों द्वारा हुई थी। चारणों का साहित्य में आगमन सामंतवादी व्यवस्था के समानांतर होता है। सामंतों के जीवन में दो बातों की प्रधानता की युद्ध और प्रेम। इसलिए रासो साहित्य में इन्हीं दो विषयों की प्रमुखता मिलती है। उस साहित्य में कवियों ने सामान्य मनुष्य की ओर ध्यान देना आवश्यक नहीं समझा। आदिकालीन रासो साहित्य में साहित्य का उद्देश्य सामंतों का मनोरंजन था, इसलिए रासो साहित्य में युद्ध और शृंगार को प्रमुख विषय बनाया गया। इस शृंगार में भी उत्तेजना है, इसमें प्रेम से अधिक काम का वर्णन है। प्रकृति वर्णन को भी काव्य में काम की उत्तेजना को बढ़ाने का साधन माना गया है। रासो साहित्य को मुख्यतः वीरगाथात्मक साहित्य कहते हैं। वीर गाथात्मक काव्यों में सर्वाधिक विवादास्पद काव्य चन्दबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' है।

### • प्रमुख रासो काव्य :

**1. पृथ्वीराज रासो :** रासो ग्रंथ में पृथ्वीराज रासो काव्य सौष्ठव एवं वर्ण्य विषय की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृति है। यह हिन्दी का प्रथम महाकाव्य माना जाता है। पृथ्वीराज रासो में युद्ध कथा तथा शृंगार कथा साथ-साथ चलती है, जीवन के कठिन कार्य व्यापारों में माधुर्य एवं सौंदर्य का ऐसा रसात्मक प्रवाह अपने आप में अनोखा है। ऋतु वर्णन, नख शिख वर्णन, युद्ध वर्णन, संयोग वर्णन, वियोग वर्णन आदि कथा संदर्भों के साथ-साथ इस महाकाव्य का विकास होता है। वस्तु वर्णन की दृष्टि से इसका वैविध्य काव्य साहित्य के लिए नितान्त स्पृहणीय है- कन्नौज में गंगा के तट पर जल भरती हुई सुन्दरियों का हृदयहारी चित्र दृष्टव्य है-

**दृग चंचल चंचल तरुनि चितवन चित्त हरन्ति ।  
कंचन कलश झकोटि कै सुन्दर नीर भरन्ति ।।**

युद्ध वर्णन कवि उसी मार्मिकता से करता है जैसा कि उस सामन्ति युग की मूल प्रवृत्ति थी कि युद्ध को क्षत्रिय लोग नीति, धर्म और चारित्रिक अभिरुचि के रूप में लेते थे-

**गजर सिंह या पुरिष नहिं रूंधै तहँ भुजै।  
सामन्त मन जानै नहिं मन्त गहै इक मरन कौ।।**

चन्दबरदाई ने आध्यात्मिक, राजनीति, योगशास्त्र, सकुन, नगर, सेना, सज्जा, विवाह, युद्ध, संगीत, नृत्य, फल-फूल, पशु-पक्षी, ऋतु, संयोग-वियोग, वसंतोत्सव आदि सभी का वर्णन करते हुए इस ग्रंथ को महाकाव्य का कलेवर प्रदान किया है।

‘पृथ्वीराज रासो’ में 69 समय (सर्ग) हैं और इसमें 68 छन्दों का प्रयोग किया गया है। मुख्य छंद निम्न हैं- कवित्त, छप्पय, दूहा (दोहा), तोमर, त्रोटक, गाहा और आर्या। चन्दबरदायी को ‘छप्पय छंद’ का विशेषज्ञ माना जाता है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने ‘पृथ्वीराज रासो’ को शुक्र-शुक्रा संवाद के रूप में रचित माना है, वहीं डॉ. बच्चन सिंह ने लिखा है- “यह (पृथ्वीराज रासो) एक राजनीतिक महाकाव्य है, दूसरे शब्दों में राजनीति की महाकाव्यात्मक त्रासदी

‘कयमास बध’ पृथ्वीराज रासो का एक महत्वपूर्ण समय (सर्ग) है। प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता के विवाद से परे हटकर यदि इसकी समालोचना की जाए तो काव्य में विविध प्रतिमानों की दृष्टि से यह अनूठा काव्य ठहरता है।

**2. परमाल रासो :** जगनिक कृत परमाल रासो को ‘आल्हखण्ड’ भी कहा जाता है। परमाल रासो में 12वीं सदी के लोक प्रसिद्ध वीरों आल्हा और ऊदल की वीरता की गाथा गायी गयी है।

यह ग्रन्थ 1865 ई. में फर्रुखाबाद के डिप्टी कमिश्नर चार्ल्स इलियट के द्वारा संयुक्त प्रान्त में प्रचलित लोकगाथा शैली की कविता को संकलित करारकर प्रकाशित कराया गया था अर्थात् मूल रूप से यह चारण काव्य है जिसकी रचना 18वीं सदी के पहले की नहीं है। इसकी भाषा ब्रज भाषा है, वाचिक परंपरा में होने के कारण इसमें समय-समय पर संशोधन होता रहा है। परमाल रासो में राजा परमार्दिदेव के दो सामन्तों आल्हा-ऊदल के वीर गाथा का आख्यान मिलता है, इसमें पहले परमाला देव और पृथ्वीराज के बीच युद्ध का वर्णन मिलता है यह अतिशयोक्ति शैली का अत्यन्त सर्वोत्कृष्ट काव्य है। आल्हा की प्रवाहमयी शैली में स्वतः स्फूर्त गीत फूट पड़ते हैं

**बारह बरस लै कूकर जीवै अरू तेरह लै जियै सियार।  
बरस अठारह क्षत्री जीवै आगे जीवन को धिक्कार ।।**

**3. हमीर रासो :** इसका रचयिता शार्ङ्गधर को माना जाता है। स्वतंत्र ग्रन्थ के रूप में यह रचना प्राप्त नहीं है, प्राकृत पैंगलम में इसके 8 छंद प्राप्त होते हैं। ग्रन्थ की भाषा हमीर के समय के कुछ बाद की लगती है। अतः भाषा के आधार पर इसे हमीर के कुछ बाद का माना जा सकता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह कृति अप्रामाणिक है।

**4. खुम्माण रासो :** दलपति विजय का खुम्माण रासो की जो वर्तमान प्रतियाँ प्राप्त होती हैं, उनमें प्रक्षिप्त अंश का पर्याप्त समावेश है। इस ग्रन्थ में महाराणा प्रताप सिंह तथा उसके बाद राज सिंह तक के कई राजाओं का वर्णन मिलता है अर्थात् इसका वर्तमान स्वरूप 18वीं सदी के अन्त का है। अधिकांश विद्वान ने 9वीं सदी के खुमाण नरेश के समकालीन दलपति विजय को इसका रचयिता माना है।

यह ग्रन्थ 5000 छन्दों का एक विशाल रासो काव्य है जिसकी हस्तलिखित प्रति पूना संग्रहालय में प्राप्त है, इसमें चौपाई, कवित्त, गाहा आदि छन्दों का प्रयोग है। इसमें वीर और शृंगार का समाहार मिलता है।

**पिउ चितौड न आविऊ सावण पहली तीज।  
जोवे बाट बिरहिणी खिण खिण अजवें खीज।।**

**5. बीसलदेव रासो :** यह रचना पश्चिमी राजस्थान की है। जिसे कवि नरपति नाल्ह ने 1155 ई. में रचा। बीसलदेव रासो विरहमूलक शृंगार काव्य है, इसमें बीसलदेव की पत्नी राजमती का विरह वर्णन बड़े ही अद्भुत तरीके से किया गया है। विरहिणी नायिकाओं में राजमती का व्यक्तित्व परम्परा से अलग हटकर दिखाई देता है-

**फागुण फरहन्हा कंपिया रूप  
चमकियउ निस नीद न भूख  
दिन राया ऋतु मालती  
म्हाकउँ मूरख राउ न देखै आई।**

बीसलदेव रासो का महत्त्व इस बात को लेकर भी है कि इसमें विरहिणी नायिका के व्यक्तित्व का विकास परम्परागत रूढ़ि से हटकर किया गया है। ]

**6. भट्ट केदार कृत ‘जयचंद प्रकाश’ और कवि मधुकर कृत ‘जयमयंक जसचंद्रिका’ में राजा जयचन्द्र की वीरता का वर्णन है, किन्तु इसके स्वतंत्र ग्रन्थ प्राप्त नहीं है।**

[aadikal ki visheshta](#) [aadikal ki pramukh pravritiyan](#) [aadikal ki pramukh pravritiyan likhiye](#) [aadikal ki pravritiyan](#) [aadikal ki pravritiyan pdf](#) [aadikal ki visheshtayen](#)



**TheHindi Sahitya**

हिंदी साहित्य की ओर एक कदम।